आचार्य महावीरकी रेखागणितीय उपपत्तियाँ

स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती, इलाहाबाद

जैन गणितज्ञोंमें सबसे अधिक ख्याति गणितसार संग्रहके रचयिता महावीरकी है। अन्य जैन गणितज्ञोंमें अभयदेवसूरि, सिंहतिलक सूरि और अमरसिंह यतिके नाम प्रसिद्ध हैं। त्रिशतिकाकी टीका करनेवाले वल्लभ भी जैन थे, और उन्होने टीका तेलगु भाषामें की थी। सिंहतिलक सुरि, (१२७५ ई०) ने श्रीपतिके गणिततिलककी टीका की, कुछ जैनविद्वानोंने श्रीधराचार्यको भी जैन माना किन्तु स्पष्टतया पाटीगणितके रचयिता श्रीधरजी शैव हिन्दू थे। अभयदेवसूरि (१०५० ई०) ने प्रसिद्ध जैनग्रन्थ स्थानांग-सूत्रकी टीकामें श्रीधरका नाम तो नहीं लिया, किन्तु श्रीधरकी पाटीगणित और त्रिशतिका—इन दोनों ग्रन्थोंसे उद्धरण दिये हैं (सदृश द्विराशिघात; २४, २८; समत्रिराशिहति; ११, १५)। प्राचीन भारतीय गणितज्ञोंकी पूर्वापरता निम्न सन्-संवतोंसे प्रकट होती है। वखसाली हस्तलिपि २०० ई०, प्रथम आर्यभटका आर्यभटीय (जन्म ४७६ ई०), भास्कर प्रथम (६२९ ई०), ब्रह्मगुप्तका ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त, (६२८ ई०), पृथूदक स्वामी नामक भाष्यकार (८६० ई०), स्कन्दसेन (जिसका उल्लेख पृथूदकस्वामीने अपने भाष्यमें किया है) नवीं शती ई० से पूर्व, लल्लकी पाटीगणित और सिद्धान्ततिलक (८वीं शती ई०), गोविन्दकी गोविन्दकृति (९वीं शती ई०), लघुभास्करीयके टीकाकार शंकर नारायण (८६९ ई०) और उदयदिवाकर (१०७३ ई०), महावीरका गणितसारसंग्रह (८५० ई०), श्रीपतिका गणिततिलक और सिद्धान्तशेखर (१०३९ ई०), भास्कर द्वितीयकी लीलावती (११५० ई०), आर्यभट्ट द्वितीयका महासिद्धान्त (९५० ई०), और नारायणकी गणितकौमुदी (१३५६ ई०)

महावीरका गणितसार-संग्रह ग्रन्थ गणितके विशेषज्ञोंके लिये बड़े कामकी वस्तु है। यह प्राचार्य कन्नड़ प्रदेशका जैन विद्वान् था। आर्यभट्ट और भास्कर एवं ब्रह्मगुप्तके समान आचार्योंने गणितका अध्ययन ज्योतिषके परिप्रेक्ष्यमें किया था, किन्तु महावीरका गणितसारसंग्रह और श्रीधराचार्यके पाटीगणित और त्रिशतिका ग्रन्थ विशुद्ध गणितके ग्रन्थ हैं। जैनधर्मके आचार्य गणितशास्त्रके स्वतन्त्र अध्ययनको भी प्रारम्भसे महत्त्व देते आये हैं। यह ठीक है कि वे यह भी स्वीकार करते हैं कि गणितका ज्योतिषमें भी उपयोग है, पर गणितके अध्ययनका स्वतः अपना भी एक क्षेत्र है। महावीरके समय तक ब्रह्मगुप्तकी प्रतिष्ठा सर्वमान्य हो गयी थी, पृथूदक स्वामीने ब्रह्मस्फुटसिद्धान्तका भाष्य किया। यह आचार्य भी महावीरका लगभग समकालीन था। दोनों ही ८५०-८६० ई० के कालके हैं। श्रीधराचार्य महावीरके ग्रन्थसे परिचित था, कई क्षेत्रोंमें उसने महावीरके गणितीय कार्यको परिवर्द्धित भी किया। गणितसार-संग्रहमें जो बात महावीरने ६ श्लोकोंमें दी है, श्रीधरने उसे अपनी त्रिशतिकामें ४ पंक्तियोंमें ही समाप्त कर दिया है। श्रीधरकी ये चार पंक्तियाँ निम्न हैं (त्रिशतिका, उदाहरण २६) :—

कामिन्या हारवल्लयाः सुरतकलहतामोक्तिकानां त्रुटित्वा।
भूमौ यातस्त्रिभागः शयनतलगतः पञ्चमांशश्च दृष्टः
आत्तः षष्ठः सुकेश्या गणकदशमकः, संगृहीतः प्रियेण।
दृष्टं षट्कञ्च सूत्रे कथय कतिपयैर्मौक्तिकैरेष हारः॥

गणितसार-संग्रहमें यही प्रश्न १२ पक्तियोंमें है। (४।१७-२२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काचिद् वसन्तमासे प्रसूनफलगुच्छभारनम्रोद्याने ।

....

तन्मौक्तिक-प्रमाणं प्रकीर्णकं वेत्सि चेत् कथय ॥

हमने यहाँ प्रथम और अन्तिम पक्तियाँ ही उद्धृत की हैं ।

महावीरके गणितसार-संग्रहका प्रभाव लगभग सभी उत्तरकालीन गणितीय ग्रन्थोंपर हैं, यह तो मानना ही पड़ेगा । अपने रचनाकालके डेढ़ सौ वर्षोंके भीतर ही इस ग्रन्थकी ख्याति दक्षिण भारतमें बहुत फैल गयी थी, राजामुन्दरीके अधीश राजराजनरेन्द्रके संरक्षणमें इसका तेलगुमें पद्यानुवाद पावलूरि मल्लने किया था, मद्रासके राजकीय पुस्तकालयमें इस अनुवादकी प्रतिलिपि विद्यमान है । १९१२में एम० रंगाचार्यने गणितसार-संग्रहका अंग्रेजी अनुवाद (प्रश्नोत्तर सहित) किया जो मद्रास सरकारकी ओरसे प्रकाशित हुआ था । कोलम्बिया विश्वविद्यालय, न्यूयार्कके डेविड यूजीन स्मिथने इसकी भूमिका लिखी थी ।

क्षेत्रमिति और क्षेत्रफल

भारतवर्षमें रेखागणितकी परम्परा वैदिक श्रौतकालसे चली आ रही है । यज्ञकी चितियों और वेदियोंके निर्माणके सम्बन्धमें, पिछले कतिपय वर्षोंसे मेरी रुचि शुल्बग्रन्थोंके प्रति रही । अभी कुछ मास ही हुये, चार शुल्बसूत्रका संग्रह मैंने डा० ऊषाज्योतिष्मतीके सहयोगसे प्रकाशित किया—बौधायन-शुल्बसूत्र, आपस्तम्ब-शुल्बसूत्र, कात्यायन-शुल्बसूत्र और भामह-शुल्बसूत्र । बौधायन और आपस्तम्ब-शुल्बसूत्रोंकी प्राचीन कतिपय टीकाएँ भी हम लोग प्रकाशित कर चुके हैं । इन शुल्बसूत्रोंमें प्रसंगवश वृत्त, दीर्घचतुरस्र, समचतुरस्र और प्रउग (त्रिभुजों) की रेखागणित और उनके क्षेत्रफलोंका अच्छा विधान है ।

शुल्बसूत्रकी वैदिक परम्परामें ही तरह-तरहकी इष्टक बनानेकी परम्परा आरम्भ हुई और क्षेत्रमिति का भी इसी परम्परामें जन्म हुआ । पाटीगणितोंमें भी एक—दो अध्याय क्षेत्रमितिके रहते आये हैं । श्रीधराचार्यके ग्रन्थ पाटीगणितमें श्रीढ़ी व्यवहारके बाद अन्तिम अध्याय क्षेत्र व्यवहारका है । क्षेत्र जातिभेदसे दश प्रकारके माने गये हैं :

तब दश क्षेत्रजातयो भवन्ति, समत्रिभुजं, द्विसमत्रिभुजं,
विषमत्रिभुजं, समचतुरस्रं, त्रिसमचतुरस्रं,
द्विसमचतुरस्रं विषमचतुरस्रं, द्विद्विसमचतुरस्रं,
आयतचतुरस्रं, वृत्तं, धनुरिति ।

इन क्षेत्रोंके सम्बन्धमें अनेक पारिभाषिक शब्दोंका प्रयोग होता है, जैसे भुज, भूमि, मुखं, कोटि, कर्ण, लम्ब, अवधा, हृदयं, परिधि, व्यास, ज्या, शरश्चाप इत्यादि ।

महावीरने गणितसार-संग्रहमें १६ जातियोंके क्षेत्रोंका उल्लेख किया है :

१. तीन जातियोंके त्रिभुज—(क) सम (तीनों भुजा बराबर), द्विसम (दो भुजाएँ बराबर), और विषम (तीनों भुजाएँ अलग-अलग माप की) ।

२. पाँच जातियोंके चतुरस्र—(क) सम, (ख) द्वि-द्वि-सम (equidichostic), (ग) द्विसम (equibilateral), (घ) त्रिसम (equitritilateral), (ङ) विषम (inequilateral).

३, आठ जातियोंकी घेरेदार आकृतियाँ (वृत्त):—(क) समवृत्त (circle), (ख) अर्धवृत्त, (ग) आयतवृत्त (ellipse), (घ) कम्बुकावृत्त (शंखकी आकृतिका), (ङ) निम्नवृत्त (concave circle), (च) उन्नतवृत्त (convex ciscle), (छ) बहिचक्रवालवृत्त (outlying annulus), (ज) अन्तश्चक्रवाल वृत्त (inlying annulus).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोलह जातियोंके इन क्षेत्रोंके क्षेत्रफल निकालनेकी दो प्रकारकी विधियोंका उल्लेख महावीरने किया है :

(क) व्यावहारिक (approximate) और सूक्ष्म (accurate) :—

क्षेत्रं जिनप्रणीतं फलाश्रयाद् व्यावहारिकं सूक्ष्ममिति ।
भेदाद् द्विधा विचिन्त्य व्यवहारं स्पष्टमेतदभिधास्ये ।।७-२।।

यह कहना कठिन है कि यूक्लिडके प्रमेयोंका परिचय महावीर या अन्य क्षेत्रज्ञ गणितज्ञोंको था या नहीं। संभवतया रेखागणितीय तर्कका उस प्रकारका विकास इस देशमें नहीं हुआ, जैसा कि यूनानमें। त्रिभुजके कोणोंको नापनेका कोई पैमाना (डिगरी या समकोणोंका) उस समय नहीं था किन्तु ज्या (Sine) के रूपका अनुपात उन्हें परिचित था। ज्याओंकी अपेक्षासे ही कोण व्यक्त किये जाते थे। त्रिभुजों और चतुरस्रोंके क्षेत्रफल निकालनेके सूत्रोंका विकास महावीरने किया। प्रत्येक त्रिभुजके तीनों शीर्ष एक विशेष वृत्त (परिमण्डल, शुल्बसूत्रोंकी परिभाषामें) पर स्थित होते हैं। किन्तु सभी चतुरस्रों (quadrialtarals) के लिये ऐसा होना आवश्यक नहीं है। ब्रह्मगुप्तने ब्र० स्फु० सि०, १२।२१ [।।] और महावीरने [ग०सा० सं० ९।५० [।।] ने इस बातका ध्यान नहीं रक्खा। दोनोंने सभी चतुरस्रोंके क्षेत्रफलके लिये निम्न सूत्र दिया :

चतुरस्रका क्षेत्रफल $= \sqrt{s\,(s-a)\,(s-b)\,(s-c)\,(s-d)}$

इस सूत्रमें s = चारों भुजाओंके योगका आधा; a, b, c, d = चार भुजाओंकी पृथक् पृथक् लम्बाई। त्रिभुजको ऐसा चतुरस्र मान सकते हैं, जिसकी एक भुजाकी लम्बाई शून्य हो, अर्थात् d = ०

समीकरणसे, त्रिभुजका क्षेत्रफल $= \sqrt{s\,(s-a)\,(s-b)\,(s-c)}$

जहाँ a, b, c तीनों भुजाओंकी पृथक पृथक लम्बाई है, और $s = \frac{1}{2}\,(a+b+c)$

वस्तुतः महावीर और ब्रह्मगुप्तके ये समीकरण उन्हीं चतुरस्रोंके लिये यथार्थ हैं जिनके चारों शीर्ष वृत्तकी परिधि पर हों (cyclic quadrilateral)। सभी चतुरस्रोंके लिये सामान्य समीकरण निम्न होगा :

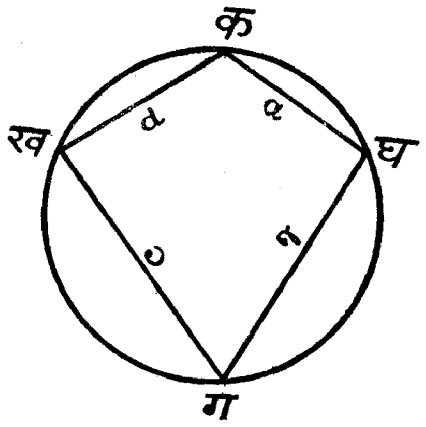

चित्र १. चक्रीय चतुरस्र

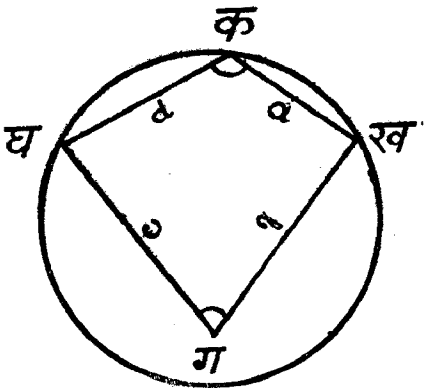

चित्र २. अचक्रीय अतुरस्र

$$S = \frac{a+b+c+d}{2}$$

$$\alpha = So^{0}$$

$$\alpha = \frac{< क + < ग}{2}$$

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुरस्रका क्षेत्रफल $= \sqrt{(s-a)(s-b)(s-c)(s-d) - abcd\,\mathrm{Cos}^2\,\alpha}$

जहाँ α = चतुरस्रके आमने-सामनेके कोणोंके योगका आधा

(चक्रीय चतुरस्रमें $\alpha = 90^\circ$, $\mathrm{Cos}\,\alpha = 0$, चित्र 1)

चतुरस्रोंका क्षेत्रफल निकालनेके लिये महावीरने निम्न नियम प्रतिपादित किया है :

भुजायुत्यर्धचतुष्काद् भुजहीनाद् घातितात् पदं सूक्ष्मं ।
अथवा मुखतलयुतिदलमवलम्बगुणैर्न विषमचतुरस्रे ।। (ग० सा० सं० ७।५०)

यही बात श्रीधरकी पाटीगणितमें इस प्रकार कही गयी है :

भुजयुतिदलं चतुर्धा भुजहीनं तदवधात्पदं गणितम्
सदृशासमलम्बानामसदृशलम्बे विषमबाहौ । (११७)

अर्थात् चारों भुजाओंका योग निकालकर उसका आधा करो और इस फलमें क्रमशः प्रत्येक भुजाकी लम्बाई घटाओ, फिर चारोंको गुणा करो, फिर इसका वर्गमूल निकाल लो । ऐसा करनेसे चतुरस्रका क्षेत्रफल निकल आवेगा ।

यह स्मरण रखना चाहिये कि यह नियम सभी चतुरस्रोंके लिये लागू नहीं है । द्वितीय आर्यभट्टने स्पष्टतया इंगित किया है कि त्रिभुजोंके लिये तो यह नियम ठीक है, किन्तु जब तक कर्ण (diagonal) का ज्ञान न हो, चतुरस्रका न तो क्षेत्रफल निकाला जा सकता है और न इसके लम्बक निर्धारित किये जा सकते हैं :

कर्णज्ञानेन विना चतुरस्रे लम्बकं फलं यद्वा ।
वक्तुं वाञ्छति गणको यो ऽसौ मूर्खः पिशाचो वा ।। (महासिद्धान्त, २५।७०)

बिना कर्णके जाने जो गणितज्ञ चतुरस्र क्षेत्रका क्षेत्रफल निकालना चाहते हैं, वे मूर्ख और पिशाच हैं । ऐसे कठोर शब्द आर्यभट्ट द्वितीयने कहे हैं । महावीर, ब्रह्मगुप्त, श्रीधर आदिने चतुरस्रोंके विषयमें जो कहा है, वह केवल चक्रीय चतुरस्रोंके विषयमें है ।

पाँच जातियोंके चतुरस्रोंके कर्ण जाननेके लिये महावीरने निम्न नियम दिया है :

क्षितिहतविपरीतभुजा मुखगुणभुजमिश्रितौ गुणच्छेदौ ।
छेदगुणौ प्रतिभुजयोः सवर्गयुतेः पदं कर्णौ ।। (ग० सा० सं०, ७।५४)

यह नियम भी केवल चक्रीय चतुरस्रोंके लिए यथार्थ है, ऊपरके श्लोकमें जो कहा है, उसे हम बीजगणितीय शब्दोंमें निम्न प्रकार व्यक्त कर सकते हैं :

$$\text{(चक्रीय) चतुरस्रका कर्ण} = \sqrt{\frac{(ac+bd)(ab+cd)}{ad+bc}}$$

$$\text{अथवा} \qquad = \sqrt{\frac{(ac+bd)(ad+bc)}{ab+cd}}$$

वृत्तमें व्यास और परिधिका सम्बन्ध—महावीरके अनुसार यदि वृत्तके व्यासको १० के वर्ग मूलसे गुणा कर दिया जाय, तो परिधिका मान निकल आता है । आज कल के शब्दों में

$$\sqrt{१०} = \pi \qquad = \frac{\text{परिधि}}{\text{व्यास}} = ३.१६$$

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृत्तक्षेत्र-व्यासो दशपदगुणितो भवेत् परिक्षेपः ।
व्यासचतुर्भागगुणः परिधिः फलमर्धमर्धेतत् ॥ (ग० सा० सं०, ७।६०)

$$\text{परिधि} \times \frac{\text{व्यास}}{४} = \text{वृत्तका क्षेत्रफल} = \frac{\text{व्यास} \times \sqrt{१०} \times \text{व्यास}}{४} = \pi r^2$$

व्यास = २ व्यासार्ध = 2r; वृत्त का क्षेत्रफल = πr^2

आर्यभट प्रथमने वृत्तकी परिधि और उसके व्यासका सम्बन्ध निम्न संख्यासे व्यक्त किया है :

$$\pi = \frac{\text{परिधि}}{\text{व्यास}}$$

$$= \frac{६२६३२}{२००००} = ३.१४१६ \text{ (आर्यभट)}$$

$$= \frac{१६ \times ३९२७}{१६ \times १२५०} = ३.१४१६ \text{ (भास्कर)}$$

आयतवृत्त (ellipse) अर्थात् दीर्घवृत्तके व्यास और परिधि—आयतवृत्तको आज हम दीर्घवृत्त कहते हैं। इसके दो व्यास होते हैं। एक तो बड़ा और दूसरा छोटा। आयतवृत्तकी परिधि और क्षेत्रफलके सम्बन्धमें महावीरका नियम निम्न है :

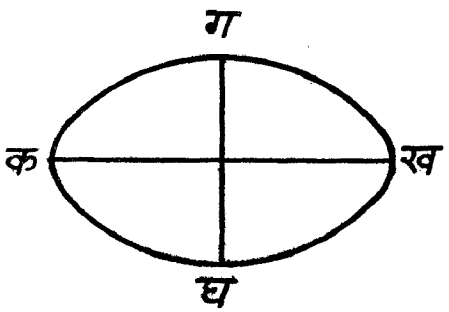

चित्र ३. आयतवृत्त

आयाम = कख = a, व्यास या विष्कम्भ = गघ = b

व्यासकृतिष्षड्गुणिता द्विषड्गुणायामकृतियुता (परं) परिधिः ।
व्यासचतुर्भागगुणाश्चायतवृत्तस्य सूक्ष्मफलम् ॥ (ग० सा० सं०, ७।६३)

छोटे व्यास (विष्कम्भ) के वर्गको ६ से गुणा करो और लम्बे व्यास (आयाम) के दुगुनेका वर्ग लेकर इसमें जोड़ो। इस वर्गका जो वर्गमूल होगा, वह परिधिकी लम्बाई होगी। परिधिको छोटे व्यासके चतुर्थांशसे गुणा करें, तो आयतवृत्तका क्षेत्रफल निकल जावेगा।

इसी बातको हम बीजीय समीकरणमें निम्न प्रकार व्यक्त कर सकते हैं :

$$\text{परिधि} = \sqrt{6\ b^2 + 4\ a^2}$$

जहाँ b = आयतवृत्तका छोटा व्यास; a = आयातवृत्तका बड़ा व्यास (आयाम)

$$\text{आयतवृत्तका क्षेत्रफल} = \text{परिधि} \times b/4$$

$$= b/4\ \sqrt{6b^2 + 4a^2}$$

(यह स्मरण रखना चाहिये कि मूल श्लोकमें यह नहीं लिखा कि परिधि निकालनेके लिए $6b^2 + 4a^2$ का वर्गमूल निकालना है)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महावीरने अभ्यासके लिये एक उदाहरण दिया है :

क्षेत्रस्य आयतवृत्तस्य विष्कम्भो द्वादशैव तु ।
आयामस्तत्र षट्त्रिंशत् परिधिः कः फलं च किम् ॥ (ग० सा० सं०, ७।२२)

अर्थात् यदि एक आयत वृत्तका विष्कम्भ (छोटा व्यास) १२ और आयाम (बड़ा व्यास) ३६ हैं, तो उसकी परिधि और क्षेत्रफल बताओ ।

$$\text{परिधि} = \sqrt{6b^2 + 4a^2}$$
$$= \sqrt{6 \times 12 \times 12 + 4 \times 36 \times 36}$$
$$= \sqrt{36 \times 24 + 4 \times 36 \times 36}$$
$$= 6 \times 2\sqrt{6 + 36}$$
$$= 12\sqrt{42} = 12 \times 6.48 = 77.76$$
$$\text{क्षेत्रफल} = b/4 \times 12\sqrt{42} = 3 \times 12\sqrt{42}$$
$$= 36 \times 6.43 = 233.28$$

महावीरने आयतवृत्तोंकी परिधि और क्षेत्रफल निकालनेकी एक स्थूल या व्यावहारिक विधि भी दी हैं :

व्यासार्धयुतो द्विगुणित आयतवृत्तस्य परिधिरायामः ।
विष्कम्भचतुर्भागः परिवेषहतो भवेत्सारम् ॥ (ग० सा० सं०, ७।२१)

अर्थात् बड़े व्यास में छोटे व्यासका आधा जोड़ो और इसे दोसे गुणा करो । ऐसा करनेसे आयतवृत्तकी परिधि मिलेगी । इस परिधिको छोटे व्यास (विष्कम्भ) के चौथाई मानसे गुणा करो, तो क्षेत्रफल मिलेगा ।

$$\text{परिधि} = 2\,(a + b/2)$$
$$\text{क्षेत्रफल} = b/4 \times 2\,(a + b/2)$$

ऊपरके उदाहरणमें, $a = 36$, $b = 12$, फलतः

$$\text{परिधि} = 2\,(36 \times 12/2) = 2 \times 42 = 84$$
$$\text{क्षेत्रफल} = 3 \times 84 = 252$$

ये उत्तर स्थूल अर्थात् त्रुटिपूर्ण हैं; सूक्ष्ममानमें परिधि 77.76 और क्षेत्रफल 233.28 है ।

कम्बुक क्षेत्र (conchiform) की परिधि और क्षेत्रफल निकालना—इन क्षेत्रोंके सम्बन्धमें भी महावीरने स्थूल और सूक्ष्म मानों के निकालनेके पृथक्-पृथक् नियम दिये हैं ।

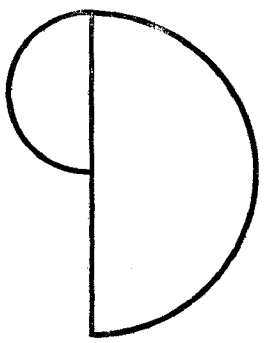

चित्र ४. कम्बुकवृत्त

कम्बुकके समान वृत्त (चित्र ४.) की अधिकतम चौड़ाईमेंसे कम्बुकके मुखका आधा घटाओ और इसे फिर तीनसे गुणा करो । ऐसा करनेसे कम्बुक वृत्तकी परिधि मिलेगी । इस परिधिके आधेके वर्गका एक तिहाई लो और इसमें मुखके आयामके आधेके वर्गका ३/४ जोड़ो, तो कम्बुक वृत्तका क्षेत्रफल मिलेगा ।

वदनार्धोनो व्यासस्त्रिगुणः परिधिस्तु कम्बुकावृत्ते ।
वलयार्धं कृतित्र्यंशो मुखार्धवर्गत्रिपादयुतः ॥

(ग० सा० सं०, ७।२३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मान लो कम्बुवृत्तका व्यास = a, मुखका आयाम = m; तो

$$\text{परिधि} = 3\left(a - \tfrac{1}{2}m\right)$$

$$\text{क्षेत्रफल} = \left[\tfrac{3}{2}\left(a - \tfrac{1}{2}m\right)\right]^2 \times \tfrac{1}{3} + (m/2)^2 \times \tfrac{3}{4}$$

एक अन्य स्थल पर महावीरने कम्बु-निभ वृत्तकी परिधि (परिक्षेप) और क्षेत्रफल दोनोंका अधिक सूक्ष्म मान निम्न शब्दों में दिया है :

वदनार्धोनो व्यासो दशपदगुणितो भवेत्परिक्षेपः ।
मुखदलरहितव्यासार्धे वर्गमुखचरणकृतियोगः ॥
दशपदगुणिता क्षेत्रकम्बुनि मे सूक्ष्मफलमेतत् ॥ (ग० सा० सं०, ७।६५–६६)

दशपदका अर्थ $\sqrt{१०}$ अर्थात् १० का वर्गमूल है । इस सूक्ष्म मानके आधार पर कम्बु-वृत्तके लिये

$$\text{परिक्षेप या परिधि} = \sqrt{10} \times \left(a - \tfrac{1}{2}m\right)$$

$$\text{क्षेत्रफल} = \left[\left\{\left(a - \tfrac{1}{2}m\right) \times \tfrac{1}{2}\right\}^2 + m/4\right]^2 \times \sqrt{10}$$

बहिः और अन्तश्चक्रवाल वृत्तोंके क्षेत्रफल—किसी वृत्तके बाहर दूसरा समकेन्द्रक वृत्त खींचा जा सकता है और इसी प्रकार कभी उसी वृत्तके भीतर भी एक समकेन्द्रक वृत्त खींचा जा सकता है । इन दोनों स्थितियोंमें दो प्रकारके चक्रवालवृत्त प्राप्त होते हैं—अन्तःश्चक्रवाल वृत्त और बहिःचक्रवाल वृत्त । दोनों अवस्थाओंमें दो समकेन्द्रक वृत्तोंके बीचमें जो क्षेत्र घिरा हुआ है, उसका क्षेत्रफल निकालना है । महावीरने इसके निकालनेकी स्थूल और सूक्ष्म—दोनों प्रकारकी गणनायें दी हैं :

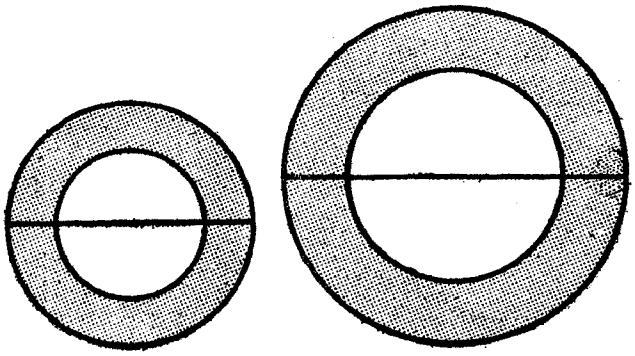

चित्र ५. (क) अन्तश्चक्रवालवृत्त

चित्र ५. (ख) बहिश्चक्रवालवृत्त

निर्गमसहितो व्यासस्त्रिगुणो निर्गमगुणो बहिर्गणितम् ।
रहिताधिगमव्यासादभ्यन्तरचक्रवालवृत्तस्य ॥ (ग० सा० सं०, ७।२८)

भीतरके वृत्तके व्यासमें निर्गमकी चौड़ाई (breadth of annular space) को जोड़ दो और इसे तीनसे गुणा कर दो, तो बहिःचक्रवालवृत्तका क्षेत्रफल निकल आवेगा । इसी प्रकार, वृत्तके व्यासमेंसे अधिगमकी चौड़ाईको घटा दो और फिर इसे ३ से गुणा करके अधिगम चौड़ाईसे गुणा करो तो अन्तश्चक्रवालवृत्तका क्षेत्रफल निकल आवेगा ।

मान लो कि दिये वृत्तका व्यास d है और इसके बाहर खींचे वृत्तका निर्गम a है तो बहिःचक्रवालवृत्तका क्षेत्र

$$= (d + a) \times 3 \times a$$

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी d व्यासके वृत्तके भीतर अधिगम a हो, तो अन्तश्चक्रवाल-वृत्तका क्षेत्र

$$= (d - a) \times 3 \times a$$

महावीरने दोनोंका एक उदाहरण दिया है :

व्यासोऽष्टादशहस्ताः, पुनर्बहिर्निर्गतास्त्रयस्तत्र ।
व्यासोऽष्टादशहस्ताश्चान्तः पुत्रैरधिगतास्त्रयः किं स्यात् ।। (ग० सा० सं०, ७।२९)

यहाँ $d = 18$ और $a = 31$

बहिःचकवाल-वृत्तका क्षेत्र $= (18 + 3) \times 3 \times 3$

$= 189$ वर्गहस्त

अन्तःचक्रवाल-वृत्तका क्षेत्र $= (18 - 3) \times 3 \times 3$

$= 135$ वर्गहस्त

स्मरण रखना चाहिये कि इन सब उदाहरणोंमें पाई (π) का मान स्थूलतया ३ माना गया है। इसे $\sqrt{10}$ या ३,१४१६ (आर्यभटका) मान लेनेपर प्रश्नोंके उत्तर कुछ भिन्न होंगे।

महावीरने गणितसार-संग्रहके सप्तम अध्यायमें अन्य आकृतियोंके क्षेत्रों और परिक्षेपोंके निकालनेके लिये भी नियम दिये हैं जो गणितज्ञोंके विशेष कामके हैं। ये आकृतियाँ निम्न हैं :

यतमुरजपणवशक्रायुधसंस्थानप्रतिष्ठितानां तु ।
मुखमध्यसमासार्धं त्वायामगुणं फले भवति ।। (ग० सा० सं०, ३।३२)

यव, मुरज (मृदङ्ग), पणव, वज्र। इनके लिये सामान्य नियम यह है : मुख पर चोड़ाई = a, मध्यमें चौड़ाई = b, पूरी लम्बाई (आयाम) = c, तो क्षेत्रफल = $\frac{1}{2}(a + b) \times c$

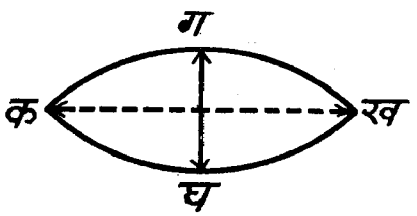

चित्र ६. यव

यवसंस्थानक्षेत्रस्यायामोऽशीतिरस्य विष्कम्भः ।
मध्यश्चत्वारिंशत्फलं भवेत् किं समाचक्षत ।।
(ग० सा० सं०, ७।३३)

मान लो यव (जौ के आकारका क्षेत्र) की लम्बाई ८० है, बीचमें चौड़ाई ४० है, दोनों नोकों या शीर्षों पर चौड़ाई शून्य है। अतः क्षेत्रफल = $\frac{1}{2}(0 + 40 \times 80) \times 80 = 1600$ वर्गहस्त।

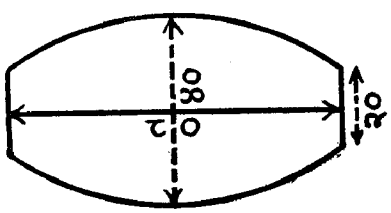

चित्र ७. मृदंग या मुरज

आयामोऽशीतिरयं दण्डामुखस्य विंशतिमध्ये ।
चत्वारिंशत्क्षेत्रे मृदंगसंस्थानके ब्रूहि ।।
(ग० सा० सं०, ७।३४)

मृदंगके आकारके क्षेत्रकी लम्बाई ८० दण्ड है, किनारों पर मुख २० दण्डका है और बीचमें मान ४० दण्डका है। फलतः

क्षेत्रफल = $\frac{1}{2}(a + b) \times c$

$a = 20$; $b = 40$; $c = 80$

क्षेत्रफल = $\frac{1}{2}(20 + 40) \times 80$

$= 2400$ वर्गदण्ड

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार हम एक उदाहरण वज्रका लेंगे ।

वज्र बीचोंबीचमें शून्य मोटाईका है, मुखकी चौड़ाई = a और आयाम = c है, अतः निम्न उदाहरणमें :

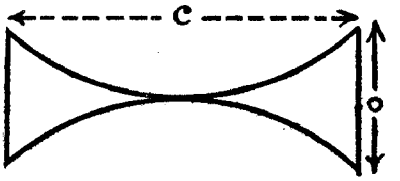

चित्र ८. बज्र

वज्राकृतेस्तथास्य क्षेत्रस्य षडग्रनवतिरायामः ।
मध्येसूचिर्मुखयो स्त्रयोदशत्र्यंशसंयुताः दण्डाः ॥
(ग० सा० सं०, ७।२६)

यहाँ $c = 96$ दंड, मुख पर का मान $= a = 13\frac{1}{3}$ दंड; $b = 0$

$$\text{क्षेत्रफल} = \frac{1}{2}\left(\frac{40}{3} + 0\right) \times 96$$
$$= 640 \text{ वर्गदण्ड}$$

महावीरने अपने ग्रन्थ गणितसार-संग्रहके क्षेत्राध्यायमें इसी प्रकारकी अनेक उपपत्तियोंका विवरण दिया है । वृत्तों, त्रिभुजों और चतुर्भुजोंके इतने विस्तार दिये हैं जिनका उल्लेख करना यहाँ सम्भव नहीं है । प्राचीन गणितसे सम्बन्ध रखनेवाले इतिहासमें महावीरका नाम अमर है और कोई भी इतिहासकार इस गणितज्ञकी उपेक्षा नहीं कर सकता है । आर्यभटीय, वखशाली हस्तलिपि, पाटीगणित (श्रीधरकी) और ब्रह्मस्फुटसिद्धान्तके समान गणितसार-संग्रह अमर ग्रन्थ है, जिससे प्रत्येक भारतीय गणितप्रेमीको परिचित होना चाहिये ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org